ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 371-373
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

आदिवासी विमर्श : अर्थ व अवधारणा

डॉ0 अमित कुमार

एसोसिएट प्रोफेसर– हिन्दी विभाग, जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल पी0जी0 कालेज, बाराबंकी (उ0प्र0) भारत

Received- 07.12. 2021, Revised- 13.12. 2021, Accepted - 19.12.2021 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांशः पिछले कुछ दशकों से आदिवासी जन–जीवन से जुड़े सवाल (जल, जंगल और जमीन से सम्बन्धित) प्रमुखता से उभरकर सामने आए है। अस्मिताओं से जुड़े विमर्शों में 'आदिवासी विमर्श' भी एक महत्वपूर्ण विमर्श है। आदिवासी विमर्श और उसकी अवधारणा से पूर्व आदिवासी कहते किसे है, वह कौन है, कहाँ से आए हैं ? इसको समझना जरूरी है – 'आदिवासी' शब्द का सीधा अर्थ है, आरम्भिक या प्रारम्भ से निवास करने वाले 'मूल निवासी'। "आदिवासी देश के मूल निवासी माने जाने वाले तमाम आदिम समुदायों का सामूहिक नाम है।"[1] हांलाकि इन्हें आधिकारिक रूप से भारत में 'अनुसूचित जनजाति' (Scheduled tribes) का नाम दिया गया है।

कुंजीभूत शब्द–आदिवासी जन–जीवन, उभरकर, आदिवासी विमर्श, समुदायों, आधिकारिक रूप, अनुसूचित जनजाति।

आदिवासियों को लेकर समाज की मुख्यधारा के एक हिस्सें में गलत धारणा इस रूप में दिखाई देता है कि उन्हें बिना असभ्य, जंगली, बर्बर आदिम समझा जाता है। जब कि यह समझ सत्य से कोसों दूर है। असलियत में आदिवासियों के जल, जंगल और जमीन को हड़पने, कब्जा करने के लिए उक्त गलत धारणा को प्रचारित किया गया है। दरअसल – "भारत के घने जंगलों में, पहाड़–पर्वतों में, घाटियों–दर्रो में आदिवासी अपना जीवन जी रहा था। उस जंगल पर, उस हिस्से पर आदिवासी का ही अधिकार था, उसकी सत्ता थी। फल–फूल, लकड़ी, शिकार के लिए उसे किसी से मंजूरी लेने की जरूरत नहीं थी। जंगल पर अधिकार आदिवासी का ही था। खैबर दर्रे से आर्य भारत आए। वे रथ, बर्छी, कुल्हाड़ी, गाय, घोड़े, ढ़ोरो की फौज लेकर आए और पहला हमला उन्होने आदिवासियों पर ही किया।"[2] यह सर्वमान्य है कि आर्य भारत के मूल निवासी नहीं थे, वे 'मध्य एशिया' से भारत आए थे। प्रसिद्ध इतिहासकार रामशरण शर्मा ने आर्यो के भारत आगमन के बारे में लिखा है कि– "इस बात के पुरातात्विक और भाषाई साक्ष्य है जिनके आधार पर हम कह सकते है कि आर्य भाषा–भाषी मध्य एशिया से भारत वर्ष में आए।"[3] और भारत में उनका संघर्ष यहां के मूल निवासियों जिन्हें अनार्य के रूप में हम जानते हैं, के साथ हुआ और आर्यों ने उन्हें उत्तर भारत से मध्य और दक्षिण की ओर पलायन करने पर मजबूर किया। घने जंगलो में आदिवासियों को खदेड़ने का काम यहीं से शुरू हुआ।

आज हजारों सालों से तथाकथित सभ्यता से दूर प्रकृति और जंगलों में रहने वाले आदिवासी एक समुदाय के रूप में सामूहिक जीवन यापन करते चले आ रहें हैं। – "दैत्य, पिशाच, राक्षस, असूर ऐसे अनेक उपहासपूर्ण शब्दों में अनार्यों के अस्तित्व की चर्चा वैदिक साहित्य तथा रामायण–महाभारत आदि ग्रन्थों में की गई है।"[4] जाहिर सी बात है कि जब आदिवासियों ने आर्यो का प्रतिरोध किया होगा, अपने अस्तित्व के लिए आर्यो से संघर्ष किया होगा, वहीं से आर्यो ने आदिवासियों के लिए असूर और राक्षस जैसे शब्दों को गढ़ा होगा। यह एक विडम्बना ही है कि आजादी के बाद भी आदिवासियों को संवैधानिक रूप से 'आदिवासी' न कहकर उन्हें 'अनुसूचित जनजाति' कहा गया। 'अनुसूचित जनजाति' एक औपनिवेशिक शब्दावली है, जिसे अंग्रेजों ने अपने फायदे के लिए गढ़ा था। दरअसल अंग्रेजो ने अपने औपनिवेशिक शासन के दौरान आदिवासियों और उनके संसाधनो – जल, जंगल, जमीन का दोहन करने के लिए दो तरीके अपनाए एक तो '1874' में 'शेडयूल्ड डिस्ट्रिक्ट एक्ट' लागू कर भारत के बहुत सारे जिलो को 'अनुसूचित जिलों' का दर्जा देकर दूसरा जंगलो को अपने आधिपत्य में लाने के लिए 1864, 1865 और 1878 के द्वारा वन विभाग की स्थापना और वन अधिनियम के प्रावधान लागू कर। "1878 के वन अधिनियम में यह प्रावधान किया गया कि किसी स्थान को जंगल घोषित करने के बाद वहां पर रहने वाले लोगो के सम्पत्ति अधिकार को मान्यता दी जाएगी। लेकिन इसके लिए यह जरूरी था कि दावा करने वाले लोग अपने इस दावे के पक्ष में कोई लिखित प्रमाण पेश करें। ऐसा न होने पर उन्हें इस जमीन का 'अतिक्रमक' घोषित कर दिया गया। बहुत सी जगहों को जंगल घोषित करते वक्त लोगों के अधिकार सही तरीके से तय नहीं किये गए। इस कारण उनके सारे अधिकार खत्म हो गए।"[5] इस तरह अंग्रेजो ने अपने फायदे के लिए, अपनी साम्राज्यवादी लूट को जारी रखने के लिए उक्त नियमों–अधिनियमों का इस्तेमाल किया। लेकिन आदिवासियों ने अंग्रेजों की इस लूट और जंगल में उनके दखल के खिलाफ खुलकर प्रतिरोध किया, बिरसा मुण्डा का अंग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह और संघर्ष को उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है।

आजादी के बाद 'राष्ट्रीय विकास' के नाम पर आदिवासियों के जल, जंगल और जमीन का दोहन, और विस्थापन तेज हुआ है। इसका व्यापक दुष्प्रभाव पर्यावरण के विनाश के रूप में आज देखा जा सकता है। देश की आजादी के बाद भारतीय संविधान में 'आदिवासियों' को 'अनुसूचित जन जाति' कहा गया। जो निश्चित ही आदिवासी समाज और उनकी संस्कृति की

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

विशेषताओं को प्रकट या उद्घाटित नहीं करता है। आजकल तो 'आदिवासी' के लिए 'वनवासी' कहने का चलन भी बढ़ा है। "आदिवासियों को 'जंगली' या 'वनवासी' दक्षिण पंथी लोग कहते हैं उनको असभ्य और बर्बर साबित करने के लिए, लगभग उसी अंदाज में जिस अंदाज में उपनिवेशवादी शक्तियाँ 'ट्राइब' या 'सेवेज' कहती हैं, ताकि उनके समाज और संस्कृति को पिछड़ा घोषित कर दक्षिणपंथियों को उन्हें 'सभ्य' बनाने का ठेका मिल जाए। पिछले कुछ दशकों में हिंदुत्व की संरक्षक शक्तियां आदिवासियों की 'घरवापसी' के नाम पर उनका 'हिन्दूकरण' कर रही है।"[6] राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ जैसे दक्षिणपंथी संगठन आदिवासियों को वनवासी कहते हैं। इससे उनके इस तर्क को बल मिलता है कि आर्य भारत के मूल निवासी हैं और वनवासी जंगलों मे रहने के कारण पिछड गये हैं, अतः उन्हें विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए सभ्य बनाना जरूरी है।

लेकिन, अनेक प्रगतिशील, और वामपंथी तथा अन्य शोध अध्येताओं, आदिवासी समूहों और संगठनों के विचारकों का स्पष्ट मत है कि आर्य यहाँ के मूल निवासी नहीं थे यहां भारत के मूल निवासी आदिवासी ही थे जिन्हें आर्यों नें (जो कि बाहर से भारत में आए थे) छल, साजिश, और अपने से भिन्न नस्ल के आधार पर उन्हें भागने और जंगलों में रहने को विवश किया। – "वास्तव में, आदिवासी आर्यो से पूर्व का मनुष्य समूह है। वह इस भूमि का मूल मालिक है। सही अर्थ में वह ही क्षेत्राधिपति है। इसलिए कुछ अध्येताओं ने उन्हें 'अँबरिजनल' कहकर संबोधित किया है, जो उचित भी है। वनराई के बच्चे ही इस भूमि की आदि सन्तान हैं। गोंड़, भील, करेली आदि आदिवासी जनजातियों के आर्य पूर्व निवास के बारे में महात्मा ज्योतिबा फूले जी ने मार्मिक वचन कहें हैं। वे लिखते हैं –

'गोंड भील क्षेत्री ये पूर्व स्वामी
पीछे आए वहीं इरानी
शूर, भील मछुआरे मारे गए रारों से
ये गए हकाले जंगलो गिरिवनों में।"[7]

वैश्विक सन्दर्भ (अमरीका और ऑस्ट्रेलिया के मूल निवासियों के साथ यूरोपियनो द्वारा किए जाने वाले बर्बरता और शोषण की बुनियाद पर विकास का उदाहरण जग जाहिर है) को देखने से लगता है कि भारत के आदिवासी ही मूल निवासी थे और बाहर से भारत में आए आक्रान्ताओं ने उन्हें अपने से भिन्न मानते हुए उनके साथ बर्बर अत्याचार किया और उन्हें भागने और जंगलों में रहने के लिए मजबूर किया। इस आधार पर यह स्पष्ट है कि आदिवासियों को 'वनवासी' कहना सही नहीं है। यहाँ तक कि अंग्रेज उपनिवेशवादियों द्वारा 'अनुसूचित जनजाति' नाम भी उपयुक्त नहीं लगता। – "जैसे अनुसूचित जाति की जगह 'दलित' शब्द गहरे अर्थ रखता है, वैसे ही अनुसूचित जनजाति केवल आरक्षण या नौकरियों में हिस्सेदारी के संदर्भ में प्रासंगिक हो सकता है आदिवासी एकता और संघर्षो की परंपरा का बोध नहीं करा पाता। 'आदिवासी' शब्द उस चेतना का भी प्रतीक है जिसकी मदद से उन्होंने अपने दुःख–दर्दो को समझा है और जो उन्हें मुक्ति की राह में आगे बढ़ा रही है। 'आदिवासी' पद में एक आंदोलनधर्मिता है जो 'जनजाति' में नहीं।"[8] आदिवासी विमर्श के लिए आदिवासी समाज और संस्कृति की विशेषताओं की पहचान जरूरी है।

जब हम आदिवासी कहते है तो इसका यह मतलब नहीं है कि यह कोई एक जाति या समरूप समाज है बल्कि भारत मे कई तरह के आदिवासी समुदाय हैं जिनमें परस्पर बहुत सारी भिन्नताएं हैं, कई ऐसे आदिवासी समुदाय हैं जो बहुत पिछड़े है और कई ऐसे है जो काफी आगे बढ़ चुके हैं। कुछ आदिवासी समुदाय खेती करते हैं, तो कुछ अभी भी जंगलों में रहकर उन्हीं जंगलों से अपने जीवन यापन के लिए, आदिम तरीके से इस्तेमाल कर रहें हैं। यानि अभी भी वो जंगल पर पूरी तरह निर्भर हैं। स्पष्ट है कि भारत में कई तरह के आदिवासी समुदाय है जैसे भारत के – "पूर्वोत्तर में कितने अलग–अलग तरह के आदिवासी समाज है और उनके बीच कितने तरह के अन्तर्विरोध हैं और वे सभी अपनी–अपनी अलग पहचान को कायम रखने के लिए कितना संघर्ष कर रहे हैं। इसके साथ ही पूर्वोत्तर के आदिवासी समुदायों से बाकी भारत के आदिवासी समुदायों में कई तरह के महत्वपूर्ण फर्क हैं। एक बुनियादी फर्क जो हमेशा ध्यान में रखना चाहिए वह यह है कि मध्य, उत्तर और पश्चिमोत्तर भारत में जो आदिवासी समाज रहते हैं वे सदियों से अपने चारों ओर हिन्दू आबादी से घिरे रहे हैं। इस कारण उनके अन्दर बाकि हिन्दूओं से अपनी स्वायत्तता के बोध के बावजूद अलगाव की तीव्र भावना नहीं मिलती ..... लेकिन पूर्वोत्तर के आदिवासी एक जमाने से मुख्य भारत भूमि से बिल्कुल अलग रहें हैं। इसलिए बाकी भारत के साथ उनका लगाव और जुड़ाव वैसा कभी नहीं हो सकता जैसा मध्य और उत्तर भारत के आदिवासियों का है। .... यही कारण है कि पूर्वोत्तर के आदिवासी समुदायों पर छठा शिडयूल लागू किया गया है जिसके फलस्वरूप उनकी जमीन की पूर्ण सुरक्षा है और वहाँ उनके अपने इलाके हैं, जहां उन्हीं की परिषदें स्थानीय प्रशासन चलाती हैं।"[9] हांलाकि आजकल मणिपुर और उससे सटे अन्य जिलों में वहां के आदिवासियों और स्थानीय समुदायों के बीच परस्पर वैमनस्य, घृणा और हिंसा का जो रूप देखने को मिला वह बेहद गंभीर चिंता का विषय है।

बहरहाल आदिवासियों में परस्पर बहुत सारी भिन्नताओं के बावजूद उनमें एक महत्वपूर्ण समानता यह है कि उनके लिए

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-14, No.-IV, Issues-22, YEAR- Oct.-Dec.-2021

भूमि या जमीन कोई संपत्ति नहीं जिसे खरीदा या बेचा जाए बल्कि वह उसका अपना एक ऐसा इलाका या क्षेत्र होता है, जहां वह स्वतंत्रतापूर्वक समूह के रूप में रहता है। जहाँ वह सदियों से अपनी पुरानी पुरखों की परंपराओं को संजोते हुए रहता चला आ रहा है। साथ ही सभी आदिवासी समुदायों के बीच एक और बहुत महत्वपूर्ण समानता देखने को मिलती है कि वह अपने जंगल, प्रकृति और परिवेश मे एकमेक है, उसका अपने जंगल और प्रकृति से गहरा लगाव, 'भाव और चेतना' दोनो ही रूपों में दिखाई देता है। प्रकृति उसके लिए सबकुछ है। "आदिवासी प्रकृति और मनुष्य के बीच कोई भेद नहीं करते। यह उनकी एक खूबसूरत विशेषता है। चर, अचर, जड़, चेतन, पहाड़, पत्थर, नदी तालाब, मनुष्य और जीव–जंतु – सब उनके लिए एक जैसे सजीव है। सबके अन्दर एक जैसी आत्मा का निवास है। यह आत्मा का निवास उनके लिए किसी शास्त्र में लिखी हुई बात नहीं है यह उनके जीवन दर्शन में गूंथी हुई चीज है और उनके रोजमर्रा के जीवन दृष्टि का अंग रही है। प्रकृति और मनुष्य की एकता में उनका गहरा विश्वास रहा है ..... यही उनकी धर्म दृष्टि है, यही उनकी साहित्य दृष्टि है और यही उनकी आध्यात्मिक दृष्टि और यही उनका सौन्दर्यबोध भी है।"[10] लेकिन आदिवासी समुदाय और उसका जंगल आज दोनो लोभ, लालच और विकास के नाम पर विस्थापन दोहन की विभीषिका झेल रहें हैं। आज आदिवासियों को उनकी अपनी जमीनों और जंगलो से उजाड़ा जा रहा है ताकि वहाँ के जंगलों को काटकर जमीनों की खुदाई करके वहाँ से खनिजो और अन्य धातुओं को निकाला जा सके। वर्तमान समय में आदिवासी विमर्श के सामने यह एक गंभीर चुनौती और सवाल है कि आदिवासियों और जंगलों तथा उनमे रहने वाले तमाम जीव–जंतुओं, पशु–पक्षियों, पेड़ो की हजारों प्रजातियों जो कि हमारे पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए बेहद जरूरी है, कैसे बचाया जाए, उन्हें सुरिक्षत रखा जाए। आज पूरी दुनिया पर्यावरण के विनाश से उपजे दुष्परिणामों को झेल रही है। ऐसे में हमे अपनी प्रकृति और जंगलो को और नष्ट होने से रोकना एक अनिवार्य लक्ष्य होना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गंगा सहाय मीणा (संपादक), आदिवासी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2014 पृष्ठ सं0 19.
2. रमणिका गुप्ता (संपादक), आदिवासी कौन, राधाकृष्ण पेपरबैक, नई दिल्ली, संस्करण 2022 पृष्ठ सं0 15.
3. गंगा सहाय मीणा (संपादक), आदिवासी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2014 पृष्ठ सं0 27.
4. रमणिका गुप्ता (संपादक), आदिवासी कौन, राधाकृष्ण पेपर बैक, नई दिल्ली, संस्करण 2022 पृष्ठ सं0 25.
5. अभय कुमार दुबे (संपादक), समाज विज्ञान विश्वकोश, खण्ड–1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016 पृष्ठ सं0 130.
6. गंगा सहाय मीणा (संपादक), आदिसाहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, संस्करण 2014 पृष्ठ सं0 26.
7. रमणिका गुप्ता (संपादक), आदिवासी कौन, राधाकृष्ण पेपरबैक, नई दिल्ली, संस्करण 2022 पृष्ठ सं0 27.
8. गंगा सहाय मीणा (संपादक), आदिवासी साहित्य विमर्श, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली संस्करण 2014 पृष्ठ सं0 28.
9. वीर भारत तलवार, आदिवासी और आदिवासी साहित्य की अवधारणा तद्भव पत्रिका (संपादक–अखिलेश) अंक, 34 नवम्बर 2016, पृष्ठ सं0 30.
10. वही, पृष्ठ सं0 31.

*****